पग-पग पर उम्मीदों की झाड़ियां

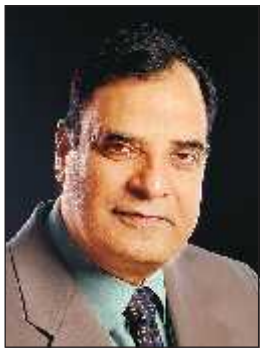

आलोक मेहता

गणतंत्र में हर नागरिक को सत्ता व्यवस्था से बड़ी उम्मीदें होना स्वाभाविक है। जितना बड़ा पद, उतनी अधिक अपेक्षाएं। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने पिछले दिनों लगभग 75 मिनट तक प्रेस कांफ्रेंस में हर कड़वे-मीठे सवालों के उत्तर देने की कोशिश की। इस बार शायरीनुमा कोई जवाब नहीं दिया। सरकार की विफलताओं और भ्रष्टाचार की जिम्मेदारी के मुद्दे पर तीखे प्रश्नों से भी उत्तेजित नहीं हुए। फिर भी हमारे पत्रकार साथी, टिप्पणीकार, संपादक संतुष्ट नहीं हुए। सरकार या प्रधानमंत्री की विफलताओं पर तीखी आलोचना मेरे जैसे पत्रकारों ने कई बार लिखी है। लेकिन 'ओल्ड स्कूल' की पत्रकारिता का अनुभवी होने के कारण मुझे लगा कि मनमोहन सिंह इस प्रेस कांफ्रेंस में अपना पक्ष रखने, दामन साफ दिखाने, महंगाई और भ्रष्टाचार रोकने के लिए अपनी क्षमता के अनुरूप काम कर सकने तथा कमियों के बावजूद हर मोर्चे पर निपटने के दावों से अधिक क्या कह सकते थे? क्या वह यह कहते कि सरकार की कुछ विफलताओं के लिए वह स्वयं जिम्मेदार हैं और अगले चुनाव के बाद भी वह प्रधानमंत्री बनना चाहते हैं? यदि वह सारा दोष अपने सिर पर स्वीकार कर लेते तो, उनसे सवाल पूछा जाता कि 'आपने पहले इस्तीफा क्यों नहीं दिया और आज ही क्यों नहीं देते?' मतलब ऐसी बहुत सी बातें हैं, जो अव्यावहारिक लगती हैं।

मनमोहन सिंह की तुलना इंदिरा गांधी या जवाहरलाल नेहरू से नहीं की जा सकती। फिर भी इस प्रेस कांफ्रेंस के संदर्भ में पं. नेहरू की अंतिम प्रेस कांफ्रेंस (22 मई 1964) के एक अंश की ओर ध्यान देना दिलचस्प होगा। नेहरू तो महान नेता थे ही, उस समय के पत्रकार-संपादक भी आज की तुलना में अधिक काबिल थे। उस प्रेस कांफ्रेंस में भी एक वरिष्ठ पत्रकार ने सवाल किया- 'आप महंगाई की समस्या को कैसे हल करना चाहेंगे? संसद में और बाहर भी इस बारे में बहुत कुछ कहा जा चुका है और कुछ उपाय भी शायद किए गए, लेकिन कम से कम हमें कोई परिणाम दिखाई नहीं देते?' पं. नेहरू ने जवाब दिया- 'मुझे अफसोस है कि मैं यहां महंगाई के बारे में विस्तार से नहीं बता पाऊंगा। यह एक कठिन और जटिल समस्या है।' इस संदर्भ में एक और सवाल दागा गया- 'क्या आप खाद्यान्नों की कीमत पर किसी तरह का नियंत्रण लगाने के बारे में इरादा रखते हैं?' पं. नेहरू ने उत्तर दिया- 'जब हम नियंत्रण की बात करते हैं तो हम उपभोक्ता के दृष्टिकोण से बात करते हैं। लेकिन उत्पादक के दृष्टिकोण का क्या होगा? उन्हें उत्पादन के लिए प्रोत्साहन देना भी एक महत्वपूर्ण पहलू है। मेरा विचार है कि बिचौलिए लोग बहुत तरीकों से जो कीमतें बढ़ाते हैं, उसे निश्चय ही नियंत्रित किया जा सकता है।'

मनमोहन सिंह के जवाब भी तो इसी तरह के हैं। महंगाई रोकने के लिए वह कोई चमत्कारिक फार्मूला नहीं दे सकते हैं और उन्होंने किसानों को पिछले 10 वर्षों में अनाज के चार गुना अधिक दाम देने की ओर ध्यान दिलाया। बिचौलियों को हटाने के लिए केंद्र की वर्तमान या पिछली सरकारें कुछ कहतीं और करतीं रही हैं। महंगाई और भ्रष्टाचार पर नेहरू, शास्त्री, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी, नरसिंह राव और अटल बिहारी वाजपेयी के जवाबों में लगभग समानता पढ़ने को मिल जाएगी। इस दृष्टि से मनमोहन सिंह के तर्क का भी औचित्य है कि 'इतिहास में उनके काम का आकलन होगा। आज आप जैसा चाहें- आकलन करें।' मतलब संभव है कि आने वाले समय में अगली सरकार और उसके प्रधानमंत्री से तुलना करते समय पांच-दस साल बाद आप मनमोहन सिंह को ही बेहतर प्रधानमंत्री की श्रेणी में मानें।

बहरहाल, इसमें कोई शक नहीं कि लोकतंत्र में प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, सांसद, विधायक, पार्षद, पंच-सरपंच को उम्मीदों पर खरा उतरने की कोशिश के साथ तीखी आलोचना झेलने को तैयार रहना चाहिए। मनमोहन सिंह हों या भाजपा के भावी प्रधानमंत्री पद के दावेदार नरेन्द्र मोदी अथवा रातोरात राष्ट्रीय नेता बन गए अरविन्द केजरीवाल से जनता की अपेक्षाएं कम नहीं होंगी। इस दृष्टि से भाजपा की कमान संभालने वाले नेताओं को तूफानी भाषण में यह कहते हुए संभलना चाहिए कि 'पिछले 67 सालों में कुछ नहीं हुआ और देश रसातल में चला गया।' इन 67 वर्षों में ही जनता पार्टी और भारतीय जनता पार्टी की सरकारें आई हैं। कुछ प्रदेशों में भी भाजपा को विभिन्न दौर में 15 वर्षों तक राज करने के अवसर मिले हैं। तो क्या उनके मुख्यमंत्रियों ने कुछ नहीं किया? अटलजी ही नहीं भैरो सिंह शेखावत, वीरेंद्र कुमार सखलेचा, सुंदरलाल पटवा, कल्याण सिंह, राजनाथ सिंह, शांता कुमार, मदनलाल खुराना, साहब सिंह वर्मा, उमा भारती, वसुंधरा राजे, शिवराज सिंह चौहान, रमन सिंह सहित भाजपा के कई नेताओं ने मुख्यमंत्री के रूप में क्या प्रदेशों या समाज के लिए कुछ नहीं किया? गुजरात भी भारत का ही हिस्सा है और वहां की प्रगति राष्ट्रीय गौरव की बात है। रामदेव न राजनीतिज्ञ हैं न ही विद्वान इतिहासकार। उनके भाषणों में गलतियां, गालियां और भारत के बर्बाद होने की बातों को गंभीरता से भले ही न लिया जाए, संघ से शिक्षित नरेन्द्र मोदी और आई.आई.टी. के शिक्षित वर्ग का गौरव कहलाने वाले श्रीमान अरविन्द केजरीवाल को 67 वर्षों की सामाजिक-आर्थिक प्रगति को 'कूड़ेदान' कहने से बचना चाहिए। हां, सत्ता व्यवस्था में कुछ सुधार का अभियान जयप्रकाश नारायण, राममनोहर लोहिया, नंबूदरिपाद जैसे नेताओं ने चलाया। कामरेड प्रकाश करात और मॉडर्न कांग्रेसी जयराम रमेश भी अरिवन्द केजरीवाल के राजनीतिक मॉडल के सामने नतमस्तक हो रहे हैं। कामरेड और कांग्रेसी क्या अपनी संगठनात्मक क्षमताओं पर हार मानते दिख रहे हैं। उनके पास मजदूर-किसान नेताओं का अभाव कैसे हो गया? अब वे आम आदमी पार्टी की बैसाखी बनने की तैयारी क्यों कर रहे हैं? कमजोर बैसाखी और खतरनाक होती है। संभव है आम आदमी पार्टी के नेताओं का लोक सभा में बहुमत का सपना सच हो जाए, लेकिन तब भी क्या कांग्रेस, भाजपा और कम्युनिस्ट पार्टियों को अपनी पहचान और सशक्त प्रतिपक्ष की भूमिका की जरूरत नहीं होगी? प्रशांत भूषण जम्मू-कश्मीर में सेना की उपस्थिति पर जनमत संग्रह को 'निजी राय' के रूप में उचित मानते हों, लेकिन बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, उड़ीसा, आंध्र में सशक्त माओवादियों से निपटने के लिए भी क्या यही फार्मूला चलेगा? हर प्रदेश में बिजली, पानी, सड़क, पुल का फैसला 'जनमत संग्रह' से होने लगा, तो समाज की अपेक्षाएं कितनी पूरी होंगी? दिल्ली की तरह ही अन्य राज्यों में भी जनता उज्ज्वल भविष्य की उम्मीद रखती है। लेकिन यदि वहां भी 'जनमत संग्रह' में बहुमत किसी अल्पसंख्यक समुदाय के विरुद्ध हो जाए तो क्या कुशासन एवं अराजकता नहीं हो जाएगी? ■

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह हों या भाजपा के भावी प्रधानमंत्री पद के दावेदार नरेंद्र मोदी अथवा रातोरात राष्ट्रीय नेता बन गए अरविन्द केजरीवाल से जनता की अपेक्षाएं कम नहीं होने वाली हैं। इस दृष्टि से भाजपा की कमान संभालने वाले नेताओं को तूफानी भाषण देते समय यह कहते हुए संभलना चाहिए कि 'पिछले 67 सालों में कुछ नहीं हुआ और देश रसातल में चला गया।' इन 67 वर्षों में ही जनता पार्टी और भारतीय जनता पार्टी की सरकारें आई हैं। यही नहीं कुछ प्रदेशों में भी भाजपा को विभिन्न दौर में 15 वर्षों तक राज करने के अवसर मिले हैं। तो क्या उनके मुख्यमंत्रियों ने कुछ नहीं किया?

alokmehta7@hotmail.com